आईए

नहजुल बलाग़ा

से सीखते हैं

(ज़बान)

हुज्जतुल इस्लाम

जवाद मोहद्दिसी

८

आइए

नहजुल बलाग़ा

से सीखते हैं

(ज़बान)

हुज्जतुल इस्लाम
जवाद मोहद्दिसी

ट्रांस्लेशनः **अब्बास असग़र शबरेज़**

किताब : ज़बान

राइटर : हुज्जतुल इस्लाम जवाद मोहद्दिसी

ट्रांस्लेटर : अब्बास असग़र शबरेज़

पहला प्रिन्ट : अगस्त 2017

तादाद : 2000

पब्लिशर : ताहा फ़ाउंडेशन, लखनऊ

प्रेस : न्यु लाइन प्रॉसेस, दिल्ली

क़ीमत : 25 रुपए

+91- 9956 62 0017
8127 79 3428

Contents

अपनी बात

आज की दुनिया भीड़-भाड़, हुल्लड़-हंगामे और चकाचौंध की दुनिया है जिसमें इन्सान और इन्सानियत के ख़िलाफ़ हर वक़्त शैतानी चालें और शैतानी साज़िशें खेली जा रही हैं जिसकी वजह से हम जैसे इन्सान तरह-तरह की साइकॉलोजिकल व रूहानी बीमारियों और मुश्किलों में घिरे हुए हैं बल्कि मुश्किलों के एक ऐसे दलदल में फंसे हुए हैं जिस से निकलने का रास्ता भी नज़र नहीं आता। इसकी सबसे बड़ी वजह यह है कि जिन दुनियावी बातों की वजह से हम इन मुश्किलों में फंसे हुए हैं, उन मुश्किलों से निकलने के लिए भी हम उन्हीं लोगों की तरफ़ देखते हैं जिन्होंने हमारे चारों तरफ़ इन मुश्किलों का जाल बुना है। नतीजा यह होता है कि हम मुश्किलों में और फंसते जाते हैं। जबकि ज़िन्दगी की मुश्किलों से बाहर निकलने और एक सही ज़िन्दगी बिताने के लिए अल्लाह ने अपनी किताब कुरआन और मासूम इमामों की शक्ल में इल्म के ख़ज़ाने हमारे पास भेजे हैं। इमामों व अहलेबैत[अ०] की ज़िंदगी और उनका बताया रास्ता हमारे लिए सबसे अच्छा रास्ता था और उनमें भी हज़रत अली[अ०] ने जो कुछ कहा या लिखा उस को समेट कर लिखी गई किताब नेहजुल बलाग़ा सबसे अलग है जो हर ज़माने में हमें सही रास्ता दिखाने के लिए सबसे रौशन चिराग़ है।

नेहजुल बलाग़ा एक ऐसी किताब है जिसमें हज़रत अली[अ०] ने ज़िन्दगी के हर मसले और हर मुश्किल के बारे में बात की है और उस मुश्किल से निकलने के लिए हमें रास्ता दिखाया है।

जो किताब आपके हाथों में है इसमें कोशिश की गई है कि दुनिया भर में मशहूर किताब 'नेहजुल बलाग़ा' में लिखी बातों को बिलकुल आसान ज़बान में अपने उन नौजवानों के सामने पेश किया जाए जो हज़रत अली[अ०] की बातों को पढ़ना और समझना चाहते हैं ताकि हम अपने पालने वाले से ज़्यादा से ज़्यादा क़रीब हो सकें।

यह किताब आईए! नहजुल बलाग़ा से सीखते हैं (8) ईरान के एक मशहूर स्कॉलर हुज्जतुल इस्लाम जवाद मोहद्दिसी ने लिखी है जो **ज़बान** के बारे में है। आपके सामने यह उसका हिन्दी ट्रांस्लेशन है।

इस सीरीज़ की

पहली कड़ी	**तौबा**
दूसरी	**दुआ**
तीसरी	**शैतान**
चौथी	**टाइम**
पाँचवी	**इमाम अली[अ०] की वसिय्यत**
छटी	**दोस्ती**
सातवीं	**अल्लाह की बन्दगी**

और यह सारी किताबें ताहा फ़ाउंडेशन छाप चुका है। अब यह आठवीं किताब **ज़बान** बारे में है जो आपके हाथों में है।

इस सीरीज़ के अभी और भी हिस्से बाक़ी हैं। अल्लाह तआला ने तौफ़ीक़ दी तो वह भी जल्दी ही आपके सामने पेश किए जाएंगे।

किताब छपती है तो उसमें कहीं न कहीं कमियाँ या ग़लतियाँ रह ही जाती हैं। यह किताब आपके हाथों में है। इसे पढ़ने के बाद जो कमियाँ आपको दिखाई दें वह हमें ज़रूर बताईए ताकि अगले एडिशन में उन्हें दूर किया जा सके।

ताहा फ़ाउंडेशन
लखनऊ

पहली बात

ज़बान एक ऐसा टूल है जिसके सहारे हम दूसरों से आसानी से जुड़ जाते हैं।

हम अपनी ज़बान से जो कुछ बोलते हैं वह कभी सही होता है और कभी ग़लत, कभी सच तो कभी झूठ, कभी इससे मोहब्बत पैदा होती है तो कभी दुश्मनी, हमारी बातें कभी आचार-सदाचार के अन्दर रहकर होती हैं तो कभी इस से बाहर, कभी हम सवाल करते हैं तो कभी जवाब देते हैं...।

बहरहाल यह तय है कि हमारे मुँह में हिलने-डुलने और ''बातचीत'' करने वाला गोश्त का यह टुकड़ा हमारी ज़िन्दगी में दोनों तरह का रोल निभाता है यानी पॉज़िटिव भी और निगेटिव भी। इसलिए इस पर कन्ट्रोल रखना बहुत ज़रूरी है और इसे अच्छाई, सच्चाई और सही बातों से हटकर किसी दूसरे काम में नहीं लाना चाहिए। इसे बुराईयों और ख़तरों से भी बचाना चाहिए। अगर ऐसा हो गया तो यही ज़बान हमें अन्दर से पाक भी बना देगी और हमारी सोच को भी ऊँचा कर देगी।

क़ुरआन-हदीस, इमामों[अ०] की ज़िन्दगियाँ या मुस्लिम स्कॉलर्स का लाइफ़-स्टाइल, हर जगह ज़बान को कन्ट्रोल करने पर ही ज़ोर दिया गया है।

यही ज़बान और यही हमारी बातें हैं जो हमें जहन्नम[1] में भी भेज सकती हैं और जन्नत[2] में भी। इसी ज़बान से हम अल्लाह की मर्ज़ी भी पा सकते हैं और इसी ज़बान से हम उसकी मर्ज़ी से दूर भी हो सकते हैं।

इमाम अली[अ०] फ़रमाते हैं: समझदार की ज़बान उसके दिल के पीछे होती है और बेवक़ूफ़ का दिल उसकी ज़बान के पीछे।[3]

---

[1] नर्क

[2] स्वर्ग

[3] नहजुल बलाग़ा, हिकमत/40

यानी समझदार पहले सोचता है फिर बोलता है मगर बेवक़ूफ़ पहले बोलता है उसके बाद सोचता है कि बात सही थी या ग़लत, नुक़सान में थी या भलाई में।

इमाम अली[अ०] की किताब नहजुल बलाग़ा बड़ी गहरी-गहरी बातों का ख़ज़ाना अपने अन्दर समोए हुए है जिनसे इमाम अली[अ०] की ज़िन्दगी पूरी तरह खुलकर हमारे सामने आ जाती है।

इमाम अली[अ०] ने इस किताब में हमें यह भी बताया है कि हमें अपनी ज़बान को कैसे इस्तेमाल करना है या क्या बोलना है, क्या बात करना और किस से बात करना है।

जो किताब आपके हाथों में है इसमें इमाम अली[अ०] की इन्हीं कुछ नसीहतों की तरफ़ इशारा किया गया है।

उम्मीद है कि इमाम अली[अ०] की इन नसीहतों को पढ़कर और समझकर हम अपनी ज़बान को हर तरह की बुराईयों से बचाकर रखेंगे और सोच-समझ कर बात करेंगे जैसा कि ख़ुद इमाम ने भी फ़रमाया हैः

ज़बान एक ऐसा ख़तरनाक जानवर है कि अगर इसे खुला छोड़ दिया जाए तो फाड़ खाए।[1]

ईरान के एक शायर *सायब तबरेज़ी* ने कितनी अच्छी बात कही हैः

मेरी एक बात सुन लो और उस पर चलकर जन्नत[2] की सैर करो। जिस जगह ‘‘कान’’ बना जा सकता हो वहाँ ‘‘ज़बान’’ मत बनो। (यानी जहाँ दूसरों की बातें सुनी जा सकती हों वहाँ बोलो मत)

इन सारी बातों का निचोड़ सिर्फ़ यह है कि सुनो ज़्यादा और बोलो कम।

जवाद मोहद्दिसी

क़ुम, ईरान

---

[1] हिकमत/60

[2] जन्नत

किसी भी चीज़ को तभी पहचाना जा सकता है और तभी उसका वज़न आँका जा सकता है जब हम उसके न होने को भी समझ जाएं।

अगर हमारे पास ज़बान न होती तो क्या होता? हम अपनी ज़रूरतों, अपनी ख़ुशी या ग़म और पसन्द या नापसन्द को कैसे बताते? हम जो कुछ जानते हैं उसे दूसरों को किस तरह सिखाते? लोगों से हमारा रिश्ता कैसे बनता? अगर हमारे पास ज़बान न होती तो हम न जाने कितनी चीज़ों से हाथ धो बैठते।

अल्लाह ने हमें ज़बान दी है और यह ज़बान हमारे मुँह के अन्दर हिलती है तो शब्द बनते हैं और इन शब्दों के मायनी बनते हैं जिनके सहारे ही हम दूसरों से बात कर पाते हैं।

हज़रत अली[अ०] ने अल्लाह की एक नेमत यह बताई है कि अल्लाह ने इन्सान को ज़बान भी दी है जिससे बातचीत की जाती है:

> अल्लाह ने उसे बचाने वाला दिल और बोलने वाली ज़बान दी है।[1]

---

[1] ख़ुतबा/81

एक दूसरी जगह पर इमाम अली[अ०] इन्सान में पाई जाने वाली बड़ी अजीब-अजीब चीज़ों को गिनाते हुए फ़रमाते हैंः

> यह इन्सान बड़ी अजीब सी चीज़ है कि वह चर्बी से देखता है और गोश्त के लोथड़े से बोलता है।[1]

जो लोग अल्लाह से मोहब्बत करते हैं उनकी ज़बान पर हर पल अल्लाह का ही नाम रहता है।

हज़रत इमाम अली[अ०] इस नेमत का शुक्र अदा करने और अल्लाह को याद करते रहने का शौक़ दिलाते हुए फ़रमाते हैंः

> तुम से सिर्फ़ शुक्र करने के लिए कहा गया है और तुम पर वाजिब किया गया है कि अपनी ज़बान से उसको याद करते रहो।[2]

जिस तरह किसी भी नेमत का शुक्र यह है कि उसको नेमत देने वाले की मर्ज़ी के हिसाब से इस्तेमाल किया जाए उसी तरह ज़बान को भी बस अल्लाह की मर्ज़ी के हिसाब से ही चलना चाहिए।

अपनी किताब *बोस्तान* में ईरान के मशहूर शायर सादी शीराज़ी कहते हैंः

> जानवर चुप रहते हैं लेकिन इन्सान बोलता रहता है।
> जिसकी ज़बान चुप हो वह अच्छा है या जो बुरी बातें किये जा रहा हो वह अच्छा है ?

---

[1] हिकमत/7
[2] ख़ुतबा/181

> समझदारी के साथ इन्सानों की तरह बात करना चाहिए, नही ंतो जानवरों की तरह चुप हो जाना चाहिए।
> आदमी अपनी समझ और अपनी बातों से पहचाना जाता है।
>
> इसलिए तोते की तरह बेवक़ूफ़ी भरी बातें करने वाले न बनो।

इमाम अली[अ०] का ज़ोर इस बात पर है कि जब तक उम्र बाक़ी है, ज़बान से बात हो रही है और जिस्म ठीक-ठाक है, इन नेमतों को अच्छे कामों और अल्लाह की मर्ज़ी पर चलने के लिए इस्तेमाल करना चाहिएः

> ऐ अल्लाह के बन्दो! अच्छे काम करो क्योंकि अभी जबकि ज़बानों के लिए कोई रुकावट नहीं है, बदन ठीक-ठाक और हाथ-पैरों में लचक है (और इन से जो काम चाहो ले सकते हो)।[1]

इमाम अली[अ०] ने बहुत सी जगहों पर उस हालत का नक़्शा खींचा है जब इन्सान बीमारी के बिस्तर पर होता है और उसका आख़िरी वक़्त आ जाता है, सारे रिश्तेदार उसके आसपास इकट्ठे हो जाते हैं, वह उनकी बातें सुन तो पाता है लेकिन बोल नहीं पाता, उसकी आँखों की रौशनी, कानों में सुनने और मुँह में बोलने की ताक़त ख़त्म हो जाती है। उसे इसी हालत में मौत आ जाती है और कोई कुछ नहीं कर पाता है।[2]

---

[1] ख़ुतबा/194
[2] ख़ुतबा/107 और 147

अल्लाह की इस नेमत की दूसरी क्वालिटी ज़बानों और बोलियों का अलग-अलग होना है। जैसा कि क़ुरआन ने भी ‘‘अलग-अलग बोलियों’’ को अल्लाह की निशानी बताया है।

> उसकी निशानियों में से आसमान व ज़मीन का बनना और तुम्हारी ज़बानों और तुम्हारे रंगों का फ़र्क़ भी है।[1]

इमाम अली[अ०] भी दुनिया और इन्सान के अन्दर अल्लाह के करिश्मे गिनाते हुए तरह-तरह की ज़बानों की बात कर रहे हैंः

> इन नेमतों और तरह-तरह की ज़बानों के फ़र्क़ पर ध्यान दो।[2]

इसलिए हमें ज़बान जैसी नेमत को समझना चाहिए और इसे अल्लाह की मर्ज़ी पर चलने, अल्लाह को याद करने और उसका शुक्र करने में इस्तेमाल करना चाहिए। साथ ही फ़ालतू बातों से बचते हुए सिर्फ़ अच्छी बातों में लगाना चाहिए। नहीं तो एक दिन वह भी आएगा जब यही ज़बान और हमारे बदन के दूसरे हिस्से हमारे ख़िलाफ़ गवाही देंगे।

---

[1] सूरए रूम/22
[2] ख़ुतबा/183

ज़बान के काम

ज़बान को सही से इस्तेमाल करने और सही कामों में लगाने के लिए ज़रूरी है कि हमें ज़बान के काम भी पता हों। फिर इन कामों को समझकर ज़बान को इन्हीं कामों में लगाना चाहिए।

कभी-कभी एक छोटी सी बात बड़े-बड़े काम कर जाती है। हज़रत अली[अ०] फ़रमाते हैं:

> बहुत सी बातों का असर हमले से ज़्यादा होता है।[1]

अब आइए! देखते हैं कि ज़बान के कुछ और अच्छे-अच्छे काम कौन-कौन से हैं:

(1) अल्लाह की मदद

ज़बान दीन को फैलाने, दीन को बचाने, दीन की तरफ़ बुलाने और दीन की बातें बताने का सबसे अच्छा रास्ता है। कुछ लोग ''अन्सारुल्लाह'' हैं यानी ज़बान समेत हर चीज़ से अल्लाह की मदद करते हैं। लोगों को दीन और सही रास्ते की तरफ़ बुलाते हैं।

---

[1] हिकमत/394

मालिके अश्तर के नाम लिखे ख़त में हज़रत अली[अ०] तक़्वा, अल्लाह के हुक्म पर चलने और अपनी ज़िम्मेदारियों को पूरा करने का हुक्म देने के बाद उन से दिल, हाथ और ज़बान से अल्लाह की मदद करने को कहते हैंः

> और यह कि अपने दिल, अपने हाथ और अपनी ज़बान से अल्लाह की मदद करने में लगे रहो।[1]

(2) ज़बान से जिहाद

यूँ तो ज़बान से जिहाद करने का मतलब अल्लाह और उसके दीन की मदद करना है लेकिन नहजुल बलाग़ा में ‘‘ज़बान से जिहाद’’ के नाम से अलग से एक पूरा चेप्टर भी है।

जब इमाम अली[अ०] का आख़िरी वक़्त था तो अपने दोनों बेटों इमाम हसन[अ०] और इमाम हुसैन[अ०] को अल्लाह के रास्ते में माल, जान और ज़बान से जिहाद का हुक्म दिया था।

इमाम[अ०] ने फ़रमाया थाः

> जान, माल और ज़बान से अल्लाह के रास्ते में जिहाद के बारे में अल्लाह को न भूलना।[2]

इसी तरह एक दूसरी नसीहत में इमाम ने कई तरह के जिहाद के बारे में बात करते हुए हमें यह भी सिखाया है कि ‘ज़बान से जिहाद’ कैसे किया जाता हैः

---

[1] लैटर/53
[2] लैटर/47

> पहला जिहाद हाथ का जिहाद है जिसमें तुम हरा दिये जाओगे। फिर ज़बान का जिहाद है और फिर दिल का।[1]

इसलिए ज़बान को बस अल्लाह के बताए कामों में ही लगाना चाहिए यानी ज़बान से बस दीन को फैलाने, दीन की तरफ़ बुलाने और अच्छी बातें बताने का काम ही करना चाहिए।

(3) अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुनकर (अच्छाईयों की तरफ़ बुलाना और बुराईयों से रोकना)

इमाम अली[अ०] ने बहुत सी जगहों पर अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुनकर की तीन स्टेज बताई हैं यानी दिल से, ज़बान से और अमल से। नही अनिल मुनकर और बुराईयों के बारे में आपने बहुत कड़ी-कड़ी बातें कहीं हैं। इमाम फ़रमाते हैंः

> लोगों में से एक आदमी वह है जो बुराई को हाथ, ज़बान, और दिल से बुरा समझता है जिसकी वजह से अच्छी बातें व आदतें पूरी तरह उसके अन्दर समा गई हैं और एक वह है जो बस ज़बान व दिल से बुरा समझता है लेकिन अपने हाथ से उसे नहीं मिटाता, ऐसे आदमी ने अच्छी बातों में से दो को चुन लिया है और एक को छोड़ दिया है। तीसरा आदमी वह है जो बस दिल से बुरा समझता है लेकिन उसे मिटाने के लिए

---

[1] हिकमत/375

> हाथ और ज़बान से कोई काम नहीं लेता। उसने तीन चीज़ों में दो अच्छी चीज़ों को बर्बाद कर दिया है और सिर्फ़ एक से जुड़ा हुआ है।[1]

कुछ लोगों को यह धड़का लगा रहता है कि अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुनकर करेंगे तो उन्हें मौत जल्दी आ जाएगी या उनकी रोज़ी-रोटी कम हो जाएगी।

इमाम अली[अ०] इस ग़लत सोच को ठुकराते हुए फ़रमाते हैं कि इन दोनों ज़िम्मेदारियों में से एक बड़ी ज़िम्मेदारी हुकूमत करने वाले किसी भी ज़ालिम इन्सान के सामने सीना तानकर इंसाफ़ वाली बात कहना हैः

> इन सबसे अच्छी वह सही बात है जो हुकूमत करने वाले किसी ज़ालिम इन्सान के सामने कह दी जाए।[2]

ज़ुल्म[3] से भरी हुकूमत के सामने सीना तानकर सही बात कहना और इंसाफ़ भरी बात करना भी ज़बान की ही ज़िम्मेदारी है जिससे ज़ुल्म करने वालों का झूठा दबदबा ख़त्म हो जाता है और दूसरे लोगों के अन्दर भी हिम्मत पैदा होती है कि वह भी ज़ालिमों और डिक्टेटरों से डरे बिना अपना हक़ (अधिकार) वापस लेने के लिए आगे आएं।

इमाम अली[अ०] इस बारे में इस तरह फ़रमाते हैंः

> ऐ ईमान वालो! जो आदमी देखे कि चारों ओर खुला ज़ुल्म हो रहा है और बुराईयों

---

[1] हिकमत/374
[2] हिकमत/374
[3] अत्याचार

> को ढकेला जा रहा है और वह दिल से इसे बुरा समझे तो वह (अज़ाब से) बच गया और (गुनाह से) पाक हो गया। जो आदमी ज़बान से इसे बुरा भी कहे उसे सवाब व अज्र दिया जाएगा और ऐसा आदमी सिर्फ़ दिल से बुरा समझने वाले आदमी से बेहतर है।[1]

(4) सही बात कहना

सही बात बोलना और खुलकर बोलना, असली मोमिन की पहचान है, चाहे वह बात दूसरों के लिए कड़वी ही क्यों न हो और ख़ुद कहने वाले को ही उससे नुक़सान क्यों न पहुँच रहा हो। ज़ालिम की आँखों में आँखें डालकर बात करना एक ऐसा बहादुरी भरा काम है जिससे वह पीछे हटने पर मजबूर हो जाता है।

अपने सर पर तलवार के हमले के बाद इमाम अली[अ०] ने अपने बेटों से यह वसिय्यत की थी :

> जो कहना सही काम के लिए कहना और जो करना सवाब के लिए करना।[2]

जंगे सिफ़्फ़ीन में आपके एक सहाबी ने आपकी बहुत तारीफ़ की तो आप ने उस से कहा कि मुझ से इस तरह की चापलूसी की बातें मत किया करो और यह मत समझो कि मैं सही या इंसाफ़ की बातों से नाराज़ हो जाऊँगा। इसके बाद आप ने फ़रमायाः

---

[1] हिकमत/373
[2] लैटर/47

> तुम ख़ुद को सही बात कहने और इंसाफ़ भरा मश्वरा देने से मत रोको।[1]

(5) अच्छे काम याद दिलाना

लोगों की तरक़्क़ी में और उनके आगे बढ़ने में उनकी हिम्मत बढ़ाना ही सबसे मज़बूत हथियार है। हम अच्छे लोगों के कामों को अपनी ज़बान पर लाकर और उनकी हिम्मत बढ़ाकर उनके फ़ैसलों को और मज़बूत बना सकते हैं और उनके कामों को आगे बढ़ाने में उनकी मदद कर सकते हैं। यूँ भी कहा जा सकता है कि दूसरों की हिम्मत बढ़ाना भी ज़बान का ही एक काम है।

हज़रत अली[अ०] ने अपने गवर्नर मालिके अश्तर से एक बात यह भी कही थी कि हमेशा अच्छे अन्दाज़ में लोगों के बारे में बात किया करो और अगर लोग मुश्किलों में फ़ंसे हुए हों तो उनके सब्र व बर्दाश्त को भी अपनी ज़बान पर लाया करोः

> बहादुरों के कारनामों के बारे में बात करने से उनका जोश बढ़ जाता है और टूटी हुई हिम्मतें मज़बूत हो जाती हैं।[2]

(6) ज़बान दिल के अन्दर की ख़बर देती है

कहते हैं कि ‘‘आदमी अपनी ज़बान के नीचे छुपा होता है’’।

---

[1] ख़ुतबा/214
[2] लैटर/53

यह असल में हज़रत अली[अ०] की एक हदीस है जिसमें आप फ़रमाते हैं:

> बोलो ताकि पहचाने जाओ क्योंकि आदमी अपनी ज़बान के नीचे छुपा होता है।[1]

जब कोई ज़बान खोलता है तब ही उसकी बातों से उसके इल्म[2], उसकी भलाई और उसकी समझदारी का पता लगाया जाता है।

> जब तक आदमी बात नहीं करता तब तक उसकी बुराई और अच्छाई दोनों छुपी रहती है।

इससे हटकर कभी-कभी इन्सान के भीतरी हालात को भी उसकी बातों से आसानी से समझा जा सकता है चाहे वह उन हालात को छुपाना ही क्यों न चाहे।

अमीरुलमोमिनीन[अ०] फ़रमाते हैं:

> जब किसी ने भी कोई बात दिल में छुपाकर रखना चाही वह उसकी ज़बान से अचानक निकली हुई बातों और चेहरे के हाव-भाव देखकर किसी न किसी तरह सामने आ ही जाती है।[3]

अगर सामने वाला समझदार हो तो वह ज़बान की गड़बड़ी से इस बात का अन्दाज़ा आसानी से लगा लेता है कि बोलने वाले के दिमाग़ के अन्दर क्या चल रहा है। यह तरीक़ा क्रिमनलों से क़ुबूल

---

[1] हिकमत/392
[2] ज्ञान
[3] हिकमत/25

करवाने में भी इस्तेमाल किया जाता है। यह एक साइंटिफ़िक और आज़माया हुआ तरीक़ा है।

ज़बान तरह-तरह के इल्म, नॉलेज व जानकारियों को फैलाने और दूसरों तक पहुँचाने के लिए भी एक बहुत ज़बरदस्त टूल है।

ज़बान मोहब्बत और दिल के रिश्तों को भी सामने लाती है।

वैसे यही ज़बान कीने व दुश्मनी की वजह भी बन सकती है, झगड़ा भी करा सकती है, दिमाग़ में शक भी डाल सकती है, दिलों में डर भी बिठा सकती है और किसी इन्सान के कंधों पर गुनाह का बोझ भी डाल सकती है।

इसलिए हमें इस दो मुँह वाली तलवार का इस्तेमाल बहुत सोच-समझ कर करना चाहिए।

ज़बान की बुराईयाँ

अगर ज़बान अक़्ल[1] के कन्ट्रोल में न हो और अगर बात करने वाला अपने सामने अल्लाह व दीन को न रखे तो ज़बान जैसी यह शानदार नेमत भी बहुत सारी बुराईयाँ पैदा कर सकती है। बहुत से मुसलमान स्कॉलर्स ने ''ज़बान के गुनाह'' के नाम से किताबें लिखी हैं और ज़बान के ख़तरों व बुराईयों के बारे में भी बात की है।

अब हम यहाँ ज़बान की कुछ बुराईयों की तरफ़ इशारा कर रहे हैंः

(1) ग़ीबत

ज़बान से होने वाला एक बड़ा गुनाह ग़ीबत है यानी दूसरों के पीठ-पीछे उनकी बुराई करना। जिन लोगों के अन्दर ख़ुद कोई अच्छाई नहीं होती वह ग़ीबत के रास्ते दूसरों का चेहरा बिगाड़ कर अपने लिए इज़्ज़त ढूँढते फिरते हैं। क़ुरआन ग़ीबत को

[1] बुद्धि

अपने मुर्दा भाई का गोश्त खाने के बराबर समझता है:

> एक-दूसरे की ग़ीबत भी न करो क्योंकि क्या तुम में से कोई इस बात को पसन्द करेगा कि अपने मुर्दा भाई का गोश्त खाए।[1]

अमीरुलमोमिनीन[अ०] ग़ीबत को कमज़ोर लोगों की आख़िरी कोशिश मानते हैं:

> कमज़ोर का सिर्फ़ इतना ही बस चलता है कि वह पीठ पीछे बुराई करे।[2]

इमाम दीनदार और भरोसेमन्द दीनी भाईयों की ग़ीबत और बुराई सुनने को भी बुरा समझते हैं:

> ऐ लोगो! अगर तुम्हें अपने किसी भाई की पक्की दीनदारी और उसके सही होने का पता हो तो फिर उसके बारे में अफ़वाहों पर ध्यान मत दिया करो।[3]

(2) बहसबाज़ी

फ़ाल्तू बहस और बेकार की झिक-झिक भी ज़बान की एक और बुराई है। कुछ जानने और समझने के लिए बहस करना अच्छी चीज़ है लेकिन बेवजह बहसबाज़ी करना बहुत बुरा काम है।

इमाम अली[अ०] फ़रमाते हैं:

---

[1] सूरए हुजरात/12
[2] हिकमत/461
[3] ख़ुतबा/139

> जिसने लड़ाई–झगड़े को अपनी आदत बना लिया उसकी रात कभी सुबह से नहीं मिल सकती।[1]

फ़ालतू बहसबाज़ी से बचने के बारे में इमाम फ़रमाते हैंः

> जिसे अपनी इज़्ज़त प्यारी हो वह लड़ाई–झगड़े से दूर रहे।[2]

(3) चापलूसी

चापलूस कहते हैं जो किसी की तारीफ़ तो ख़ूब करता है लेकिन दिल से उस आदमी को पसन्द नहीं करता। चापलूसी एक बहुत बुरी चीज़ है। कुछ लोगों के पास या तो तारीफ़ करने वाली ज़बान ही नहीं होती या फिर जितनी तारीफ़ करना चाहिए उस से कम तारीफ़ करते हैं।

इमाम अली[अ0] इस बारे में फ़रमाते हैंः

> किसी को उसके हक़ (अधिकार) से ज़्यादा सराहना चापलूसी है। और उसके हक़ में कमी करना या तो कम बयान करना है या फिर जलन[3]

चापलूसी में की जाने वाली तारीफ़ कभी–कभी निफ़ाक़ (Hypocrisy) की वजह से भी होती है।

इमाम अली[अ0] मुनाफ़िक़ों का चेहरा दिखाते हुए फ़रमाते हैंः

---

[1] हिकमत/31
[2] हिकमत/362
[3] हिकमत/347

> क़र्ज़ा उतारने की तरह एक-दूसरे की तारीफ़ करते हैं और बदला पाने की आस लगाए रखते हैं।[1]

(4) फ़ाल्तू बातें

कभी-कभी इन्सान की बातें फ़ाल्तू और बेकार भी होती हैं। समझदार इन्सान कभी भी बेकार की बातें नहीं करता है।

हज़रत अली[अ०] फ़रमाते हैंः

> ऐ लोगो! अल्लाह से डरो क्योंकि कोई भी आदमी बेकार पैदा नही किया गया कि वह खेल-कूद में पड़ जाए। और न उसे आज़ाद छोड़ दिया गया है कि बेकार की बातें करता रहे।[2]

इमाम अली[अ०] की दुआ में हम पढ़ते हैंः

> परवरदिगार! फ़ाल्तू बातों और ज़बान की बुराईयों को माफ़ कर दे।[3]

कभी-कभी हम अपनी बातों को ज़रा सी भी अहमियत नहीं देते, इसलिए फ़ाल्तू बातें करने से हम पर कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता।

इमाम फ़रमाते हैंः

> जो यह जानता है कि उसकी बातें भी उसके अमल का ही एक हिस्सा हैं, वह

---

[1] ख़ुतबा/192
[2] हिकमत/370
[3] ख़ुतबा/78

> मतलब की बात से हटकर और कोई बात नहीं करता।[1]

(5) ज़बानी पाखंड

जिसकी बातों और अमल में फ़र्क़ हो या जो लोगों को धोखा देने के लिए दो तरह की बातें करता हो ऐसे आदमी को मुनाफ़िक़ कहते हैं और निफ़ाक़ (पाखण्ड) इतनी ख़तरनाक बुराई है जो आमाल को जलाकर राख कर देती है।

इमाम अली[अ०] फ़रमाते हैं कि चाहे कोई कितनी भी मुश्किलें व मुसीबतें उठाकर अल्लाह की बारगाह में कुछ अच्छे काम कर ले लेकिन अगर उस आदमी के अन्दर शिर्क, बिदअत और निफ़ाक़ जैसी बुराईयाँ हों तो उसे उसके अच्छे कामों से कोई भलाई नहीं मिलेगी।

इमाम ने मुनाफ़िक़ को ''दो मुँह और दो ज़बान'' वाला कहा है:

> मुनाफ़िक़ वह है जो लोगों से दो तरह की बातें करता हो या दो ज़बानों से लोगों से बातचीत करता हो।[2]

ज़बान के निफ़ाक़ की एक शक्ल यह है कि कोई अपने दिल से तो दीन को मानता हो लेकिन अपनी प्रेक्टिकल लाइफ़ में दीन और अल्लाह के हुक्म पर न चलता हो बल्कि दीन सिर्फ़ उसकी ज़बान पर रहता हो और वह बस अपनी ज़िन्दगी गुज़ारने के लिए दीन की बातें करता हो।

---

[1] हिकमत/349
[2] ख़ुतबा/151

> लोगों का दीन तो यह रह गया है कि जिसे एक बार ज़बान से चाट लिया जाए (यानी सिर्फ़ ज़बान से दीन-दीन किया जाए)।[1]

यह वही बात है जो इमाम हुसैन[अ०] ने करबला में एक ख़ुतबे के बीच लोगों के बारे में कही थीः

लोग दुनिया के ग़ुलाम हैं और दीन उनके लिए सिर्फ़ ज़बान का ज़ायक़ा है। जब तक उनकी ज़िन्दगी का कारोबार चलता रहे तब तक वह दीन का नाम लेते रहते हैं लेकिन जब किसी मुसीबत में फंस जाते हैं और उनका इम्तेहान लिया जाता है तो दीनदार बहुत कम ही बचते हैं।[2]

अमीरुलमोमिनीन[अ०] उन लोगों की तारीफ़ करते हैं जो दो तरह की बातें नहीं करते हैं।

> जिस आदमी का दिल व ज़बान और कैरेक्टर और बातें अलग-अलग न हों, उसने अमानतदारी से काम लिया है।[3]

(6) शैतान के काम आने वाले

शैतान का काम शक डालना, धोखा देना और गुनाहों पर उभारना है। जो अपनी ज़बान के सहारे इस रास्ते में आगे बढ़ते हैं उनकी ज़बान ‘‘शैतानी ज़बान’’ होती है। असल में उनकी ज़बान से शैतान बात कर रहा होता है। हिस्ट्री में ऐसे बहुत से लोग गुज़रे हैं और आज भी शैतानी ज़बानें बहुत सी हैं।

---

[1] ख़ुतबा/111
[2] बिहारुल अनवार, 44/383
[3] ख़त/26

हज़रत अली[अ०] दीनदारों की तारीफ़ में ख़ुतबा दे रहे थे। तभी आपने वहाँ मौजूद लोगों में से किसी एक अदमी की ज़बान से कोई ग़लत बात सुनी तो फ़ौरन बहुत कड़े लहजे में उससे कहा कि आगे से अपनी ज़बान पर ऐसी बातें न लाना।

फिर आपने फ़रमायाः

> ऐसी बातों से दूर रहो क्योंकि तुम्हारी ज़बान पर यह बातें शैतान ने डाली है और ऐसी बात फिर अपनी ज़बान पर मत लाना।[1]

इमाम अली[अ०] उन लोगों को भी बुरा कहते हैं जो शैतान के पीछे-पीछे चलते हैं क्योंकि शैतान अपने कामों में उनको अपना साथी बना लेता है, उनके सीनों में अण्डे और बच्चे देता है, उनकी गोद में पलता-बढ़ता है, उनकी आँख से देखता है, उनकी ज़बान से बात करता है और उनके मुँह में ग़लत बातें डाल देता हैः

> वह देखता है तो उनकी आँखों से और बोलता है तो उनकी ज़बानों से। और उन्हीं की ज़बानों से अपनी ग़लत बातों के साथ बोलता है।[2]

ऐसे लोग जानबूझ कर या अनजाने में शैतानी ज़बान रखते हैं और शैतान के काम आने लगते हैं। उनकी बातों और उनके कामों से नुक़सान यह होता है कि लोग सही रास्ते से भटक जाते हैं इसलिए ऐसे लोग शैतान के लिए ''मुफ़्त में काम करने वाले मज़दूर'' जैसे होते हैं।

---

[1] ख़ुतबा/191
[2] ख़ुतबा/7

(7) बात सही लेकिन काम ग़लत

आम लोगों को बहकाने के लिए शैतान के इन मज़दूरों का एक काम यह भी है कि यह ऐसी बातें करते हैं जो दिखने में तो सही और सच्ची होती हैं लेकिन इन बातों के पीछे बुरी नियतें और बुरे काम छुपे होते हैं। हिस्ट्री में हमेशा ऐसा होता आया है और आज भी ऐसा ही हो रहा है। इसका सबसे खुला नमूना हज़रत अली[अ०] के ज़माने में ख़वारिज का वह नारा था जिसमें वह कहते थेः

हुक्म बस अल्लाह का चलेगा।

वह लोग अपने इसी नारे के रास्ते हज़रत अलम[अ०] के साथियों व सहाबियों के बीच फूट डालने का काम करते थे। इमाम[अ०] ने उनके और उनके इस ख़तरनाक नारे के बारे में फ़रमाया थाः

> यह बात तो सही है मगर इससे जो मतलब यह लोग ले रहे हैं वह ग़लत है।[1]

समझदारी का होना बहुत ज़रूरी है ताकि मोमिन इस तरह के चमकीले और धोखा देने वाले नारों से बच सके, ताकि मासूम इमाम के सामने आकर फूट डालने वालों का असली चेहरा और उनकी नियत पहचान सके और सही के भेस में आने वाला ग़लत उसे धोखा न दे सके।

हज़रत अली[अ०] की नज़र में अल्लाह के यहाँ सबसे ज़्यादा बुरा चेहरा उस आदमी का होता है जिसे अल्लाह ने उसकी हालत पर छोड़ दिया हो और वह दीन के सही रास्ते से बहक गया होः

---

[1] ख़ुतबा/40

> जिसके बाद वह सीधे रास्ते से हटा हुआ, बिदअत की बातों पर जान देने वाला और लोगों को भटकाने के लिए हाथ-पैर मार रहा है।[1]

ज़बान की एक बुराई दिखने में अच्छे और सच्चे नारों के ज़रिये शैतान की तरफ़ बुलाना और सीधे-सीधे लोगों को धोखा देना है।

(8) सिर्फ़ बातें

जो लोग बस ज़बान के नारे लगाते हैं लेकिन काम कोई नहीं करते, वादे करते हैं लेकिन उन्हें पूरा नहीं करते, अच्छी-अच्छी बातें तो करते हैं लेकिन हिम्मत के हिसाब से कमज़ोर होते हैं, ऐसे लोगों की पर्सनॉलिटी कच्चे धागे की तरह कमज़ोर और धोखा देने वाली होती है। अल्लाह की तराज़ू में उनके कामों की कोई क़ीमत नहीं होती है।

इमाम अली[अ०] मालिके अश्तर से फ़रमाते हैं:

> वादा करने के बाद में अपने वादे को तोड़ना मत।[2]

साथ ही कमज़ोर वादे वाले धोखेबाज़ कूफ़ियों से इमाम फ़रमाते हैं:

> तुम्हारी बातें तो सख़्त पत्थरों को भी नर्म कर देती है लेकिन तुम्हारा काम ऐसा है

---

[1] ख़ुतबा/17
[2] ख़त/53

> कि जो दुश्मनों को तुम पर छा जाने का मौक़ा दे देता है।[1]

ख़ाली-ख़ूली वादों और खोखले नारों की वजह से ऐसे लोगों पर भरोसा नहीं किया जा सकता और न ही उन से किसी सहारे या किसी तरह की मदद की कोई उम्मीद रखी जा सकती है।

एक आदमी ने इमाम अली[अ0] से नसीहत करने के लिए कहा तो आप ने फ़रमाया कि ऐसे लोगों में से न हो जाना जो बातें तो बहुत बड़ी-बड़ी करते हैं लेकिन जब कुछ करने की बात आती है तो सुस्ती दिखाते हैं:

> तुम्हें उन लोगों में से नहीं होना चाहिए, जो बात करने में तो बड़े ऊँचे रहते हैं मगर काम कम ही करते हैं।[2]

जो आदमी बातें करने के साथ-साथ काम भी करता है वह हिसाब-किताब के वक़्त मज़बूत होता है। ख़ाली बातों की कोई क़ीमत नहीं होती है। बिना हाथ-पैर हिलाए की जाने वाली बातें जाली चेक जैसी होती है।

(9) दिल के पीछे-पीछे चलना

कुछ बातें और कुछ फ़ैसले, समझदारी और तजुर्बों की बुनियाद पर होते हैं।

लेकिन कुछ बातें सिर्फ़ अपनी पसन्द-नापसन्द की वजह से होती हैं और बात करने वाला किसी लॉजिक या सच्चाई के ज़रिये बात करने के बजाए

---

[1] ख़ुतबा/29
[2] हिकमत/150

अपनी मर्ज़ी की बुनियाद पर बात करता है। ज़ाहिर है कि ऐसी बातें बातचीत करने वाले के लिए भी नुक़सानदेह होती हैं और समाज को भी ग़लत रास्ते की ओर ले जाती हैं और आपसी झगड़े भी पैदा कर देती हैं।

अमीरुलमोमिनीन[अ०] फ़रमाते हैंः

> अपनी ज़बान की ख़्वाहिशों (Desires) से हार मानकर अपने हाथों व तलवारों को काम में मत लाओ।[1]

हमें ख़बरदार किया जा रहा है ताकि हम ताक़त, रिसोर्सेस और समाजी सलाहियतों (Potential) को दीन की बुनियाद पर अल्लाह के लिए काम में लाएं न कि ज़बान की हवस, लालच और दिली पसन्द–नापसन्द की बुनियाद पर। जो भी काम किया जाए वह दीन को सामने रखकर किया जाए, न कि अपनी लालच से भरी हुई बातों की वजह से।

(10) नासमझी की बातें

कुछ चीज़ों के बारे में हर आदमी अपनी राय देने बैठ जाता है और इसे अपना हक़ (अधिकार) भी समझता है। अगर हमारी बातें नॉलेज की बुनियाद पर हों तब तो यह बहुत अच्छी बात है लेकिन अगर नासमझी की वजह से हों तो ऐसी कोई भी बात किसी काम की नहीं है। जब तक इन्सान के पास किसी चीज़ के बारे में ज़रूरत भर जानकारी न

---

[1] ख़ुतबा/188

हो तब तक उसे अपनी राय नहीं देना चाहिए। ऐसे नुक़सानों की तादाद कम नहीं है जिनकी वजह इसी तरह की नासमझी भरी बातें हैं।

अमीरुलमोमिनीन[अ०] अपने बेटे इमाम हसन[अ०] को अपनी वसिय्यत में फ़रमाते हैंः

> जिस चीज़ को नहीं जानते हो उसके बारे में बात मत करो और जिस चीज़ का तुम से कोई लेना-देना नहीं है उसके बारे में ज़बान न हिलाओ।[1]

जो लोग हज़रत अली[अ०] के वक़्त में उनके साथ होते हुए भी बहक गये थे और ग़लत बातें करने लगे थे, इमाम उनके बारे में शिकायत करते हुए फ़रमाते हैंः

> क्या जाने-बूझे बग़ैर बस बातें ही बातें रहेंगी।[2]

दूसरी जगह इमाम फ़रमाते हैंः

> जो बातें तुम नहीं जानते उनके बारे में ज़बान से कुछ न निकालो।[3]

ज़बान से होने वाले ख़तरों और इसकी बुराईयों को जानना भी बहुत ज़रूरी है क्योंकि जानने के बाद ही इन्सान बचने के लिए कुछ कर सकता है।

---

[1] ख़त/31
[2] ख़ुतबा/29
[3] ख़ुतबा/85

ग़लती ज़बान की नुक़सान सर का

आपने भी लोगों को कहते हुए सुना होगा कि ''कभी-कभी ज़बान की ग़लती की वजह से इन्सान को अपना सर भी देना पड़ जाता है।''

कभी-कभी ग़लत वक़्त पर कही गई बात इन्सान को बड़ा भयानक नुक़सान पहुँचा देती है। बल्कि ऐसे लोग भी हैं कि जिनकी जान सिर्फ़ उनकी किसी एक ग़लत बात से चली जाती है या उन्हें जेल में डाल दिया जाता है।

हाँ! अगर सही बात कहने और दीन को बचाने के लिए जान भी देना पड़े तो यह अलग बात है लेकिन आमतौर पर ध्यान रखना चाहिए कि कही जाने वाली बात से कहने वाले को कोई नुक़सान न हो रहा हो।

अमीरुलमोमिनीन[अ०] फ़रमाते हैं कि अपनी ज़बान को बचाकर रखो और अपने राज़ न खोलोः

> कुछ बातें ऐसी भी होती हैं जो किसी बड़ी नेमत (Blessing) को छीन लेती हैं और अपने साथ मुसीबत ले आती हैं।[1]

आदमी की ज़बान उसके साथ वही काम करती है जो हवा, घास-पूस के साथ करती है। हिस्ट्री में ज़बान ने बहुत से सर कटवाए हैं। ज़बान सर के लिए घरेलू दुश्मन की तरह से होती है।

अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुनकर (अच्छाईयों की तरफ़ बुलाना और बुराईयों से रोकना) हम सबकी दीनी ज़िम्मेदारी है और हदीसों में है कि यह काम बड़े वाजिबों में से है। नहजुल बलाग़ा में भी इसके बारे में कुछ कहा गया है लेकिन इस वाजिब काम को करने के लिए कुछ शर्तें भी हैं। उनमें से एक शर्त नुक़सान व ख़तरे से बचना है।

अगर किसी को यह पता हो कि उसके अम्र बिल मारूफ़ व नही अनिल मुनकर करने से उसकी या उसके रिश्तेदारों की या उसके दोस्तों या दूसरे मोमिनों की जान, माल और इज़्ज़त को नुक़सान पहुँचेगा या आगे चलकर कोई ख़तरा हो सकता है तो उस पर अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुनकर करना वाजिब नहीं है।

ध्यान रहे! अगर इस्लाम ही ख़तरे में पड़ गया हो या बिदअतों का मुक़ाबला करना हो या मुसलमानों की जान बचाना हो या मुसलमानों की इज़्ज़त को कोई ख़तरा हो तो फिर ऐसी जगहों पर ज़बान और हाथ दोनों तरह से दीन को बचाने, बिदअतों की रोक-थाम करने और बुराईयों से जंग

[1] हिकमत/381

करने के लिए मैदान में कूद पड़ना चाहिए, चाहे जान और माल का ख़तरा ही क्यों न हो।

न जाने कितने ऐसे मुस्लिम स्कॉलर्स हैं जो इमाम हुसैन[अ०] के रास्ते पर चलते हुए शहीद हो गये हैं और उन्होंने ज़ुल्म (अत्याचार) व बिदअतों के मुक़ाबले में चुप बैठे रहने को जायज़ नहीं समझा क्योंकि ऐसे मौक़ों पर इन्सान की जान नहीं जाती है बल्कि दीन बच जाता है।

इसलिए हर जगह और हर किसी के सामने अपनी ज़बान नहीं खोलना चाहिए।

कहाँ चुप रहना चाहिए कहाँ बोलना चाहिए

किस जगह बात करना चाहिए और कहाँ चुप रहना चाहिए, यह इन्सान की समझदारी और उसके अच्छे कैरेक्टर की निशानी है।

मुस्लिम स्कॉलर्स ने चुप रहने, कम बोलने और अपनी ज़बान को कन्ट्रोल करने के बारे में बहुत सी बातें कही हैं। नहजुल बलाग़ा में भी इमाम अली[अ०] ने इस बारे में काफ़ी क़ीमती बातें कही हैं।

इमाम ने एक जगह ''ज़्यादा चुप रहने'' को मोमिन की एक क्वालिटी बताया हैः

> मोमिन का चेहरा खिला हुआ और दिल अन्दर से दुखी होता है। उसकी हिम्मत बुलन्द होती है और वह अपने दिल में ख़ुद को गिरा हुआ समझता है। घमंड को बुरा समझता है और शोहरत से भागता है। उसके दुख बहुत ज़्यादा और हिम्मत बुलन्द होती है। बहुत चुप-चुप रहता है, हर वक़्त किसी न किसी काम में लगा रहता है, शुक्र करने वाला, सब्र करने वाला, सोचों में डूबा हुआ, किसी के

> आगे अपना हाथ फैलाने में कंजूस, अच्छे मिज़ाज वाला और दूसरों के साथ मेहरबानी करने वाला होता है।[1]

एक दूसरी जगह इमाम ने ऐसे लोगों की तारीफ़ की है जो फ़ाल्तू बातों से दूर रहते हैंः

> अच्छे नसीब वाला है वह जिसने बेकार बातों से अपनी ज़बान को रोक लिया।[2]

इसी तरह चुप रहने और कम बोलने को समझ के पूरा होने की निशानी बताया हैः

> जब समझ बढ़ जाती है तो बातें कम हो जाती हैं।[3]

इमाम[अ०] अपने एक दीनी भाई की बात करते हुए फ़रमाते हैंः

> अगर बोलने में कभी उसको हरा भी दिया जाए तो चुप रहने में उसे कोई नहीं हरा सकता।[4]

इस बात का मतलब यह है कि इमाम का वह साथी अपनी ज़बान का दुश्मन था। वह सुनता ज़्यादा था और बोलता कम था। उसकी एक अच्छाई ''कम बोलना'' थी और वह मेहनत और कोशिश करके इस काम में माहिर हो गया था।

किसी ने बिल्कुल सही कहा हैः

> कम बात किया करो और अगर बात करना ही है तो बस ज़रूरत भर बात

---

[1] हिकमत/333

[2] हिकमत/123

[3] हिकमत/71

[4] हिकमत/289

> करो। जो चीज़ तुम से न पूछी जाए उसके बारे में ख़ुद से बात न करो।
>
> पहले से ही दो कान और एक ज़बान दी गई है जिसका मतलब है कि दो बार सुनो और एक बार से ज़्यादा बात मत करो (यानी कम बोलो और सुनो ज़्यादा)।

इमाम ने अपने उसी साथी के बारे में यह भी कहा है:

> वह ज़्यादातर चुप रहता था।[1]

इन्सान के अन्दर यह अच्छाई मेहनत और कोशिश करने के बाद ही पैदा हो पाती है। यह इन्सान की रूह और उसके मज़बूत इरादे की निशानी है कि वह बिना सोचे और बिना समझे हुए कोई बात न करे ताकि ग़लत-सलत बातों के नुक़सान से बच सके।

चुप रहने की सारी अच्छाईयों के बावजूद कभी-कभी बोलना भी बहुत ज़रूरी हो जाता है। ऐसा तब होता है जब कही जाने वाली बात सही हो और भलाई में भी हो। ज़्यादा बोलने की सारी बुराईयों के बावजूद कभी- कभी चुप रहना भी गुनाह और बुराई बन जाता है। चुप रहने और बोलने के सही वक़्त को पहचानना बहुत बड़ी चीज़ है। कभी-कभी कोई सच्ची बात भी किसी मुसीबत या झगड़े की वजह बन जाती है। ऐसी जगह पर चुप ही रहना चाहिए क्योंकि हम ने माना कि:

---

[1] हिकमत/289

> सच्ची बात से हटकर कोई दूसरी बात नहीं करना चाहिए लेकिन हर सच्ची बात भी नहीं कहना चाहिए।

कभी-कभी सही वक़्त पर न बोलने या चुप रहने से किसी का हक़ (अधिकार) भी छिन जाता है या किसी ग़लत चीज़ के फैलने का ख़तरा बन जाता है, इसलिए ऐसी जगहों पर अपनी चुप्पी को तोड़कर सही बात ज़रूर कहना चाहिए।

इमाम अली[अ०] ने फ़रमाया हैः

> ज़रूरत के वक़्त ज़रूरी बात न कहना कोई अच्छाई नहीं है। जिस तरह जिहालत[1] के साथ बात करने में कोई भलाई नहीं है।[2]

इसलिए यह देखना बहुत ज़रूरी है कि कहाँ बोलना चाहिए और कहाँ चुप रहना चाहिए।

किसको बोलना चाहिए और किसको चुप रहना चाहिए।

किस से बोलना चाहिए और किस से बात नहीं करना चाहिए।

---

[1] अज्ञानता

[2] हिकमत/471

कम बोलना और ज़रूरत भर बोलना

बात करने वाले का एक कमाल यह भी है कि वह ज़्यादा बातों को कम से कम शब्दों में कह दे। कम बात करे लेकिन उसकी बात सोची-समझी हुई, सूझ-बूझ वाली और असरदार हो ताकि उसकी बातें मज़बूत हों और लोगों का ध्यान अपनी तरफ़ मोड़ सकें।

कम बोलने में एक भलाई यह भी है कि चुप रहने या कम बोलने वाले की एक तरह की शान बनी रहती है।

इमाम अली[अ०] फ़रमाते हैंः

> ज़्यादा चुप रहने से रोब पैदा हो जाता है।[1]

इसके उलट बात भी सही है। ज़्यादा बोलने वालों की इज़्ज़त कम हो जाती है और उनकी पर्सनॉलिटी गिर जाती है जिसकी वजह से उनकी बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता। उनकी ज़बान

[1] हिकमत/224

ग़लतियाँ भी ज़्यादा करती है और जो ज़्यादा ग़लतियाँ करता है वह लोगों की नज़रों से गिर जाता है।

इस सिलसिले में इमाम अली[अ०] फ़रमाते हैंः

> जो ज़्यादा बोलेगा वह ज़्यादा ग़लतियाँ करेगा और जिसकी ग़लतियाँ ज़्यादा होंगी उसकी इज़्ज़त कम हो जाएगी।[1]

न जाने कितने ऐसे लोग हैं जो बोलने में सही बातें नहीं चुन पाते और ज़बानी ग़लतियों में फंस जाते हैं। इस तरह उनकी इज़्ज़त भी चली जाती है और वह दूसरों को भी नुक़सान पहुँचाते हैं। इमाम अली[अ०] ने बोलने को तीर चलाने जैसा कहा है कि अगर तीर चलाने से पहले अच्छी तरह सोचा-समझा न जाए तो तीर सही जगह पर नहीं लगता।

इमाम फ़रमाते हैंः

> कभी तीर चलाने वाला तीर चलाता है और तीर निशाने पर नहीं लगता और बात ज़रा सी देर में इधर से उधर हो जाती है।[2]

इमाम ने यह बात इसलिए कही है क्योंकि कभी-कभी इन्सान अपने किसी भरोसेमन्द भाई के बारे में दूसरों से ऐसी बातें भी सुनता है जिनमें कोई सच्चाई नहीं होती। बात कही जाती है लेकिन उसका ग़लत असर बाक़ी रह जाता है और अल्लाह भी कही हुई बातों को सुनता है और उन्हें देख रहा है।

इसके बाद इमाम[अ०] एक फ़ार्मूला बताते हैंः

---

[1] हिकमत/349
[2] ख़ुतबा/139

> पता होना चाहिए कि सच और झूठ में सिर्फ़ चार उंगलियों की दूरी है। जब इमाम से इसका मतलब पूछा गया तो उन्होंने अपनी उंगलियों को इकटठा करके अपने कान और आँख के बीच में रख दिया और फ़रमाया कि झूठ वह है जो तुम कहो कि मैंने सुना है और सच वह है जिसके बारे में तुम कहो कि हाँ! मैंने देखा है।[1]

कहने का मतलब यह है कि लोग जो बात भी कहें पूरी तरह से सोच समझ कर कहें और हर सुनी हुई बात को सही न समझें बल्कि पहले उसके सही या ग़लत होने के बारे में जानने की कोशिश करें।

आदमी जो बात भी कहे अपनी जानकारी की बुनियाद पर कहे। अपनी बात को पहले सोने की तरह परखना चाहिए और उसके बाद ख़र्च करना चाहिए। यानी पहले पूरी तरह सोच-समझ लेना चाहिए और उसके बाद ही कोई बात कहना चाहिए क्योंकि बुनियाद के बिना बनी हुई दीवार मज़बूत नहीं होती है।

[1] ख़ुतबा/139

पहले सोचो, फिर बोलो

न जाने कितने ऐसे लोग हैं जो कोई बात कहने के बाद पछताते भी हैं और फिर सोचते हैं कि काश यह बात कही ही न होती।

यह पछतावा बात के ग़लत होने और बिना सोचे-समझे या जानकारी लिए बिना बोलने की वजह से होता है या फिर इस वजह से भी होता है कि जो बात उनके मुँह से निकल जाती है उससे कोई राज़ खुल जाता है, किसी की बेइज़्ज़ती हो जाती है, कोई नुक़सान हो जाता है, किसी तरह का झगड़ा पैदा हो जाता है या कोई नाराज़ हो जाता है।

इससे बात करने से पहले ख़ूब सोच-समझ लेना चाहिए। अगर सही और काम की बात हो तभी अपनी बात कहना चाहिए ताकि बाद में कोई पछतावा या नुक़सान न हो।

यह बात अमीरुलमोमिनीन[अ०] ने भी कही है। आप फ़रमाते हैंः

> जब तक तुम ने अपनी बात नहीं कही तब तक वह तुम्हारी क़ैद में है और जब कह दी तो तुम उसकी क़ैद में हो।[1]

इमाम अली[अ०] ज़बान को संभाल कर रखने का हुक्म देते हुए फ़रमाते हैं कि ज़बान आदमी को गहरी खाईयों में गिरा देती है लेकिन ज़बान को बचाए रखने के लिए तक़वा बहुत ज़रूरी है। अगर तक़वा होगा तभी आदमी अपनी ज़बान को संभाल कर रख सकता है।

इमाम अली[अ०] फ़रमाते हैंः

> बेशक! मोमिन की ज़बान उसके दिल के पीछे होती है और मुनाफ़िक़[2] का दिल उसकी ज़बान के पीछे क्योंकि मोमिन जब कोई बात कहना चाहता है तो पहले उसे दिल में सोच लेता है। अगर वह अच्छी बात होती है तभी अपनी ज़बान पर लाता है और अगर बुरी होती है तो उसे छुपा ही रहने देता है। मगर मुनाफ़िक़ की ज़बान पर जो भी आता है वह कह बैठता है। उसे कुछ पता ही नहीं होता कि कौन सी बात उसकी भलाई में है और कौन सी बात नुक़सान में।[3]

बग़ैर सोचे-समझे मुँह से निकलने वाली बात वापस नहीं ली जा सकती। जिस बात को न कहा गया हो उसे तो किसी भी वक़्त कहा जा सकता है

---

[1] हिकमत/381

[2] मुनाफ़िक़ उसे कहते हैं जिसके दिल में कुछ हो और ज़बान पर कुछ और यानी दो चेहरों वाला आदमी।

[3] ख़ुतबा/174

लेकिन जो कुछ कह दिया जाए उसको कभी वापस नहीं लिया जा सकता है बिल्कुल उस तीर की तरह जो कमान से निकल गया तो निकल गया या उस गोली की तरह जो बन्दूक़ से बाहर आ गई तो आ गई।

इमाम अली[अ०] फ़रमाते हैं:

> ग़लत वक़्त पर चुप रहने का इलाज ग़लत वक़्त पर कोई बात कहने से आसान है।[1]

---

[1] ख़त/31

अच्छी बातें

बातचीत की ख़ूबसूरती यह है कि उसमें सख़्ती और बुरी बातें न हो, उससे किसी की बुराई या किसी को नीचा न दिखाया जाए।

इमाम अली[अ०] की नज़र में किसी भी इन्सान की सबसे बड़ी पूँजी उसका अदब-तहज़ीब[1] है।

अदब-तहज़ीब जैसी कोई विरासत नहीं।[2]

इसका मतलब यह है कि अगर माँ-बाप अपने बच्चों को अदब-तहज़ीब (आचार-सदाचार) सिखाकर इस दुनिया से जाएं तो यह इतनी बड़ी दौलत है कि कोई भी विरासत[3] इसके सामने नहीं टिकती।

यह एक ऐसी चीज़ है जो इन्सान की बातों और उसकी चाल-ढाल से अपने आप सामने आ जाता है। हदीसों में भी है कि जो ग़लत तरीक़े से बातें करता है उसके पास अदब-तहज़ीब नहीं होती।

बातचीत की पाकीज़गी और अच्छाई यह है कि दुश्मन के बारे में बुरी बात न की जाए और न ही उसे नीचा दिखाया जाए। लिखा है कि जंगे सिफ़्फ़ीन

---

[1] शिष्टाचार

[2] हिकमत/113

[3] बाप का छोड़ा हुआ माल

में इमाम अली[अ०] ने सुना कि उनके कुछ साथी शाम वालों को गालियाँ दे रहे हैं। इमाम ने फ़रमायाः

> मुझे यह बात बिल्कुल पसन्द नहीं है कि तुम लोग गालियाँ देने लगो।[1]

इसका मतलब यह है कि इमाम अपने साथियों की बातों को भी पाक-साफ़ देखना चाहते हैं, यहाँ तक कि अपने दुश्मनों के बारे में भी।

कभी-कभी मज़ाक़ में कही गई बातें भी बातचीत को ख़राब कर देती हैं। इसलिए इमाम ऐसी बातें भी कहने से मना करते हैं। आप फ़रमाते हैंः

> ख़बरदार! अपनी बातचीत में हंसने-हंसाने वाली बातें मत करो, चाहे किसी की कही हुई बात ही क्यों न कह रहे हो।[2]

यूँ तो ख़ुद इमाम अली[अ०] भी बड़े हंसमुख थे और हंसमुख होना मोमिन की अच्छाईयों में से है लेकिन यह सही नहीं है कि इन्सान उन हंसाने वालों की तरह हो जाए जिनका काम ही अपनी बातों से लोगों को हंसाना होता है।

इमाम ने दीनदार इन्सान के बारे में फ़रमाया हैः

> वह कभी भी बकवास और फ़ालतू बातें नहीं करता है।[3]

ग़लत-सलत बातें दूसरों को तकलीफ़ पहुँचाती हैं और जो अपनी ज़बान और बुरी बातों से किसी भी आदमी को दुखी करे वह दीनदारों की लिस्ट से बाहर है।

---

[1] ख़ुतबा/204
[2] ख़त/31
[3] ख़ुतबा/191

बोलने की लिमिट

समझदार वह है जो अपनी बातों के लिए कुछ सीमाएं बना ले। जिस चीज़ के बारे में कुछ नहीं जानता उसके बारे में न बोले। ज़बान पर आई हर बात न कहे और अपने राज़ों को छुपाकर रखे। इस सिलसिले में कुछ बातों की तरफ़ ध्यान देना बहुत ज़रूरी हैः

(1) जिस तरह हर बात नहीं सुनना चाहिए उसी तरह हर बात कहना भी नहीं चाहिए। किस बात को कहने में भलाई या नुक़सान है इसे समझना चाहिए और बस वही बात कही जाए जो भलाई में हो।

इमाम अली[अ०] फ़रमाते हैंः

> जो बात नहीं जानते उसके बारे में ज़बान न हिलाओ, चाहे थोड़ा बहुत जानते ही क्यों न हो। दूसरों के लिए वह बात न कहो जो अपने लिए सुनना पसन्द नहीं करते।[1]

---

[1] ख़त/31

इस हदीस में दो ख़ास बातें छुपी हुई हैंः

एक यह कि इन्सान अपने इल्म[1] पर घमंड न करे और यह न समझ बैठे कि वह सब कुछ जानता है। बल्कि उसे यह एहसास होना चाहिए कि उसका इल्म कम है इसलिए उसे अपनी जानकारी के अन्दर रहकर ही बात करना चाहिए।

दूसरे यह कि यह दुनिया, एक्शन और रिएक्शन की दुनिया है। हम दूसरों के साथ जैसी बात करेंगे और जैसा कैरेक्टर अपनाएंगे वह भी हम से वैसे ही बात करेंगे और उसी तरह मिलेंगे।

> इमाम ने बार-बार इस बात पर ज़ोर दिया है कि अपने और दूसरे के बीच हर मामले में अपने आप को ही कसौटी बनाया करो।[2]

आपकी हदीसों में यह बात भी इसी सच्चाई की तरफ़ इशारा कर रही है।

इमाम अली[अ0] की एक हदीस यह भी हैः

> अच्छी बात वही है जो भलाई दे।[3]

इसलिए बातचीत करते हुए इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि बस वही बात कही जाए जो भलाई में हो और बेकार या फ़ाल्तू बातों से बचना चाहिए।

(2) दूसरी बात, अगर इन्सान किसी का कोई राज़ जानता हो तो उस राज़ का ध्यान रखना चाहिए। मुश्किलों, नुक़सानों और ख़तरों से बचने के

---

[1] ज्ञान
[2] ख़त/31
[3] ख़त/31

लिए ज़बान को संभाल कर रखना चाहिए और हर वह बात नहीं कहना चाहिए जो हम जानते हैं।

इमाम फ़रमाते हैं:

> जो नहीं जानते उसे न कहो, बल्कि जो जानते हो वह भी सब का सब न कहो।[1]

(3) एक ख़ास बात यह भी है कि हमें यह पता होना चाहिए कि हम किस से किस तरह बात करें। कहाँ सख़्ती से बात करना चाहिए और कहाँ नर्मी से ?

हज़रत अली[अ०] का इरशाद है:

> अपने भाई के लिए ख़ुद को इस बात पर तैयार करो कि जब वह तुम से दोस्ती तोड़े तो तुम उसे जोड़ लो, वह मुँह फेरे तो तुम उसके आगे बढ़ो और उसके साथ मेहरबानी करो। वह तुम्हारे लिए कंजूसी करे तो तुम उस पर ख़र्च करो, वह तुम से दूर हो तो तुम उसके पास जाने की कोशिश करो। वह सख़्ती करता रहे मगर तुम नर्मी करो।[2]

कड़वी और ग़लत बातों के मुक़ाबले में नर्मी से बात करने का यह सुनहरा फ़ार्मूला दोस्ती को मज़बूत बनाने और दुश्मनी को दूर करने में बहुत असरदार होता है। इमाम ने मालिके अश्तर को जो लैटर लिखा था उसमें उनको ग़लत वक़्त पर और हद से ज़्यादा ग़ुस्सा करने और लोगों से सख़्त ज़बान में बात करने से साफ़-साफ़ मना किया था।

---

1 हिकमत/382
2 ख़त/31

इमाम फ़रमाते हैं:

> देखो! ग़ुस्से की तेज़ी, बेवजह के जोश, हाथों के ग़लत इस्तेमाल और ज़बान की तेज़ी पर हमेशा कंट्रोल रखो।[1]

(4) बातचीत करने में एक ख़ास बात तहज़ीब के अन्दर रहकर बात करना है। जिसने हमें बोलना और लिखना-पढ़ना सिखाया यानी टीचर, उसकी इज़्ज़त करना भी हमारी ज़िम्मेदारी है।

इमाम फ़रमाते हैं:

> जिसने तुम्हें बोलना सिखाया है उसी पर अपनी ज़बान की तेज़ी मत दिखाओ और जिसने तुम्हें रास्ते पर लगाया है उसी के मुक़ाबले में अपनी ज़बान का जादू मत चलाओ।[2]

(5) ''मुझे नहीं पता'' कहने की हिम्मत रखना बहुत बड़ी चीज़ है। जिसके पास यह कहने की हिम्मत न हो और वह समझता हो कि दुनिया की हर चीज़ के बारे में जानता है ऐसा आदमी बहुत सी जगहों पर झूठ बोलेगा या अपनी तरफ़ से बातें गढ़ेगा और जाहिलों वाली बातें करेगा जिस से उसकी बेइज़्ज़ती भी हो सकती है और उसका कोई दूसरा बड़ा नुक़सान भी हो सकता है।

हज़रत अली[अ०] फ़रमाते हैं:

> जिसकी ज़बान पर कभी यह बात न आए कि ''मैं नहीं जानता'' तो वह चोट

---

[1] ख़त/53

[2] हिकमत/411

> खाने की जगहों पर चोट खाकर ही रहता है।[1]

एक दूसरी जगह इमाम ने पाँच बहुत ख़ास बातें बताई हैं जिनमें से एक यह है कि अगर किसी से कोई बात पूछी जाए और उसको पता न हो तो उसे कह देना चाहिए कि "मैं नहीं जानता हूँ":

> अगर तुम में से किसी से कोई ऐसी बात पूछी जाए जिसे तुम न जानते हो तो यह कहने में बिल्कुल न शरमाओ कि मैं नहीं जानता।[2]

(6) ज़बान बोलने वाले के कन्ट्रोल में होना चाहिए, न कि आज़ाद और बेलगाम। ज़बान का बेलगाम होना आदमी को मुसीबतों में डाल देता है। आदमी को अपनी ज़बान का मालिक होना चाहिए, न कि अपनी ज़बान का ग़ुलाम।

एक जगह हज़रत अली[अ०] ने फ़रमाया है कि जो अपनी परेशानियाँ दूसरों को बताता है वह दूसरों की नज़र में ख़ुद को गिरा लेता है।

इमाम फ़रमाते हैं:

> जिसने अपनी ज़बान को अपने कन्ट्रोल में न रखा, उसने ख़ुद अपने ही हाथों अपने आप को गिरा लिया।[3]

अगर कोई अपनी ज़बान का मालिक न हो तो उसकी बेसोची-समझी बातें और उसकी ज़बान उसको बेइज़्ज़त कर देगी और उसके बाद लोगों की नज़र में उसकी कोई इज़्ज़त नहीं बचेगी।

---

[1] हिकमत/85
[2] हिकमत/82
[3] हिकमत/2

जैसी कहनी वैसी करनी

कोई भी इन्सान हो ख़ासकर अगर वह मुसलमान और मोमिन भी हो तो उसे पहचानने का एक फ़ार्मूला उसकी बातें और उसके अमल का एक होना है।

अगर कहने और करने में फ़र्क़ हो तो यह एक तरह का निफ़ाक़ (दौग़लापन) है। जबकि इसके उलट अगर इन्सान जैसा कहे वैसा ही करे भी तो यह उसकी सच्चाई की निशानी है।

इमाम अली[अ०] ने भी फ़रमाया हैः

> जो करता तो कुछ नहीं मगर दुआ माँगता रहता है वह ऐसे ही है जैसे बिना कमान के तीर चलाने वाला।[1]

यानी अगर अच्छी बातें भी बिना कुछ किये की जाएं तो यह भी बिना गोली के बन्दूक़ चलाने जैसा ही है जो आगे नहीं जा पाती और अपने निशाने तक नहीं पहुँच पाती।

अल्लाह ने ऐसे लोगों को बहुत बुरा कहा है जो सिर्फ़ बातें बनाते हैं और करते कुछ भी नहीं हैः

---

[1] हिकमत/337

> ऐ ईमान वालो! आख़िर वह बात क्यों कहते हो जिस पर तुम ख़ुद ही नहीं चलते हो।[1]

इस बुराई के मुक़ाबले में सही तरीक़ा यह है कि इन्सान जो कुछ कहे उसे पहले ख़ुद भी करके दिखाए और अपने कहे पर चलने वाला सबसे पहले वह ख़ुद हो ताकि उसकी बातें दूसरों पर असर डाल सकें।

हज़रत अली[अ०] फ़रमाते हैंः

> सवाब इसमें है कि जो कुछ ज़बान से कहा जाए वह सब कुछ हाथ-पैरों से किया भी जाए।[2]

ख़ुद इमाम अली[अ०] ऐसे ही इन्सान थे। अगर आप लोगों को अल्लाह के बताए रास्ते पर चलने के लिए कहते थे तो सब से पहले ऐसा करके दिखाते थे और अगर लोगों को किसी गुनाह से रोकते थे तो लोगों से पहले ख़ुद उस गुनाह से दूर रहते थे।

इस बारे में इमाम फ़रमाते हैंः

> ख़ुदा की क़सम! मैं तुम्हें अल्लाह के किसी हुक्म पर चलने के लिए उस वक़्त तक नहीं कहता जब तक कि तुम से पहले मैं ख़ुद उस हुक्म पर न चल पड़ूँ और किसी गुनाह से मैं तुम्हें तभी रोकता हूँ जब तुम से पहले ख़ुद को उस गुनाह से दूर कर लेता हूँ।[3]

---

[1] सूरए सफ़/2
[2] हिकमत/42
[3] ख़ुतबा/173

इमाम अली[अ०] अपने एक दीनी भाई के बारे में फ़रमाते हैं:

> वह जो करता था वही कहता था और जो नहीं करता था उसे कहता भी नहीं था।[1]

इसलिए इन्सान जो बात भी करे वह उसकी सोच, उसके दिल-दिमाग़ और उसके दीन से भी मेल खाती हो। सिर्फ़ अच्छी बातें करना और अच्छे अन्दाज़ में बातें करना काफ़ी नहीं है।

---

[1] हिकमत/289

अहलेबैत[अ०]

पैग़म्बरे इस्लाम[स०] और उनके अहलेबैत[अ०] हर तरह से हमारे लिए रोल-मॉडल हैं। रसूलुल्लाह[स०] और उनके अहलेबैत की हदीसें सच्चाई व गहराई के हिसाब से ऊपर हैं। यह हदीसें नूर और नसीहत से भरी हुई हैं। इमाम अली[अ०] के मुताबिक़ः

> दीन और सच्चाई की ज़बानें हैं।[1]

हज़रत अली[अ०] अल्लाह के आख़िरी रसूल[स०] के बारे में फ़रमाते हैंः

> उनकी बातें सही-ग़लत का फ़ैसला करने वाली और पूरी तरह से इंसाफ़ वाली भरी होती थीं।[2]

इसी तरह इमाम अली[अ०] ने रसूले इस्लाम[स०] को ''तबीबे दव्वार व हकीमे सय्यार'' यानी घूम-घूम कर इलाज करने वाला भी बताया है क्योंकि हमारे रसूल की बातें बड़ी गहरी और नूरानी होती थीं जो इन्सानों की जिहालत[3] और गुमराही जैसी बीमारियों का

---

[1] ख़ुतबा/87
[2] ख़ुतबा/94
[3] अज्ञानता

इलाज हैं। वह हर जगह और हर वक़्त अपने बीमारों तक यह मरहम पहुँचाते रहते थे ताकि अंधेरे भरे दिलों को नूर, बहरे कानों को सुनने की ताक़त, अंधी आँखों को रौशनी और गूँगी ज़बानों को बोलने की ताक़त दे सकें।

इमाम फ़रमाते हैंः

> वह एक ऐसे तबीब (हकीम) की तरह थे जो इलाज अपने साथ लिये शहरों-शहरों चक्कर लगा रहा हो। जिसने अपने मरहम ठीक-ठाक कर दिये हों और दाग़ने के औज़ार तपा लिये हों। वह अंधे दिलों, बहरे कानों, गूँगी ज़बानों के इलाज के लिए जहाँ ज़रूरत हो इन चीज़ों को इस्तेमाल में लाता हो, और दवा लिये सोए हुए और परेशानी के मारे हुओं की खोज में लगा रहता हो।[1]

अमीरुलमोमिनीन हज़रत अली[अ०] भी इस मैदान के सरदार हैं। आपकी हदीसों और आपके लिखे ख़तों को मिलाकर जो किताब तैयार की गई है उसका तो नाम ही ''नहजुल बलाग़ा'' है। दूसरे सारे मासूम इमाम[अ०] भी इसी तरह थे यानी उनकी हदीसें और उनकी बातें भी बड़ी ख़ूबसूरत, बड़ी गहरी और ख़ुदाई रंग में डूबी हुई होती थी। इन हज़रात ने जब भी कोई बात कही तो हमेशा इल्म[2] के प्यासों की प्यास ही बुझाई है और अगर कहीं चुप भी रहे हैं तो किसी न किसी ख़ास वजह से ही चुप रहे हैं।

---

[1] ख़ुतबा/108

[2] ज्ञान

हज़रत अली[अ०] ने अल्लाह के आख़िरी नबी[स०] के बारे में फ़रमाया है:

> उनकी ज़बान से निकली हुई बातें (इस्लाम का) बयान और उनकी ख़ामोशी (दीन की) ज़बान होती थी।[1]

कभी-कभी चुप रहना बातचीत से ज़्यादा काम कर जाता है। अल्लाह के भेजे हुए मासूम नबियों व इमामों की ख़ामोशी में भी एक ख़ास तरह की गहराई होती है। उनकी चुप्पी कमज़ोरी, असलियत को छुपाने या दूसरों के डर की वजह से नहीं होती है।

हज़रत इमाम अली[अ०] अहलेबैत[अ०] के बारे में फ़रमाते हैं:

> वह ऐसे हैं कि उनका दिया हुआ हर हुक्म उनके इल्म का पता देगा और उनकी ख़ामोशी में भी उनकी ज़बान छुपी हुई होगी।[2]

एक दूसरी जगह इमाम अली[अ०] रसूल के अहलेबैत के बारे में फ़रमाते हैं:

> अगर बोलते हैं तो सच बोलते हैं और अगर चुप रहते हैं तो भी किसी को बात में पहल करने का हक़ (अधिकार) नहीं होता।[3]

किसी जगह कुछ लोगों के बीच में कोई आदमी बात करने के लिए खड़ा हुआ तो उसकी ज़बान

---

[1] ख़ुतबा/94
[2] ख़ुतबा/145
[3] ख़ुतबा/152

लड़खड़ा गई और वह कुछ बोल ही नहीं सका। तभी हज़रत अली[अ०] ने अहलेबैत[अ०] के बारे में और इस ख़ानदान की ज़बान पर महारत के सिलसिले में कुछ बातें कही थीं जिनमें से एक बात यह भी थीः

> हम (अहलेबैत) कलाम (ज़बान) के बादशाह हैं। यह चीज़ हमारी रगों में समाई हुई है और पेड़ की इसकी टहनियाँ हम पर झुकी हैं।[1]

हज़रत अली[अ०] की यह बातें ज़बान के मैदान में अहलेबैत[अ०] के सबसे आगे होने का पता दे रही हैं।

कौन है जो पैग़म्बरे इस्लाम[स०] और उनके अहलेबैत[अ०] की हदीसें पढ़े या सुने, उनका दूसरों की बातों से मुक़ाबला करे और इन हदीसों के सबसे अच्छा होने, सबसे अच्छा होने और दिल में उतर जाने को न माने?

सुनहरी बातों और अनमोल मोतियों से भरी नहजुल बलाग़ा, सहीफ़-ए-सज्जादिया, दुआए अरफ़ा, ज़ियारते जामेआ कबीरा, दुआए नुदबा और दूसरी शिया हदीस की किताबें इस सच्चाई का एलान कर रही हैं कि यह ख़ानदान, ज़बान और अदब[2] के मैदान में सबके लिए आइडियल है।

हम अल्लाह का शुक्र करते हैं कि हमारे पास अहलेबैत[अ०] की हदीसों की बड़ी क़ीमती दौलत है। हमें इस क़ीमती ख़ज़ाने की इज़्ज़त करना चाहिए और इस से ख़ूब अच्छी तरह से फ़ायदा उठाना चाहिए।

---

[1] ख़ुतबा/230

[2] शिष्टाचार

आख़िरी बात

हर इन्सान की अच्छाई और बुराई उसकी बातों से सामने आ जाती है।

इन्सान के दिल का अंधापन या जगमगाहट भी उसकी बातों से समझ में आ जाती है। दूसरे लोग यह अन्दाज़ा भी लगा लेते हैं कि आदमी के अन्दर सच्चाई, मेहरबानी और दूसरों के लिए भलाई पाई जाती है या दुश्मनी, जलन और बुरी सोच। इसलिए कम बोलना और चुप रहना वह पर्दा है जो दूसरों से इन्सान की कमज़ोरियों और बुराईयों को छुपा लेता है और उसकी इज़्ज़त को बचाए रखता है।

हज़रत अली[अ०] रसूलुल्लाह[स०] की कही बात सुनाते हुए फ़रमाते हैंः

> किसी बन्दे का ईमान उस वक़्त तक मज़बूत नहीं हो सकता जब तक कि उसका दिल मज़बूत न हो और दिल उस वक़्त तक मज़बूत नहीं हो सकता जब तक कि ज़बान मज़बूत न।[1]

[1] ख़ुतबा/174

यानी ग़ीबत, इल्ज़ाम, झूठ, दूसरों के राज़ खोलने और उनकी बेइज़्ज़ती करने से बचना।

इसलिए हमारी बातों और ज़बान से किसी की इज़्ज़त पर कोई आँच नहीं आना चाहिए।

हज़रत अली[अ०] अपनी एक दूसरी हदीस में हमें आपसी झगड़ों और एक-दूसरे के मुक़ाबले में हटधर्मी करने से बचने का हुक्म देते हैं। इमाम चाहते हैं कि उनके मानने वाले अपने बीच युनिटी और आपसी एकता को सजाए रखें और दुश्मनों के मुक़ाबले में आपसी झगड़ों से बचें:

> और ज़बान एक रखो।[1]

इसलिए झगड़ा उभारने वाली और ''युनिटी'' को ख़तरे में डालने वाली कोई भी बात न तो ज़बान से कही जाए और न कहीं लिखी जाए।

समाज में हर एक को सच्चाई और बहादुरी के साथ सही बात कहना चाहिए और ग़लत चीज़ों जैसे गुनाहों, बिदअत और ज़ुल्म[2] के मुक़ाबले में कड़ा स्टैंड लेना चाहिए।

हज़रत अली[अ०] बड़े दुखी अन्दाज़ में हालात का रोना रोते हुए फ़रमाते हैं:

> तुम ऐसे वक़्त में जी रहे हो जिसमें सही बात कहने वाले कम, सच बोलने वाले पीछे और सही रास्ते पर चलने वाले बेइज़्ज़त हैं।[3]

समाज को यह ख़राब दिन दिखाने वाला फ़ैक्टर क्या है? वह कौन से फ़ैक्टर हैं जिनकी वजह से

---

[1] ख़ुतबा/174
[2] अत्याचार
[3] ख़ुतबा/230

लोगों की ज़बान सच्ची और साफ़ नहीं होती है और वह चापलूसी के साथ एक-दूसरे की झूठी तारीफ़ों में लगे रहते हैं लेकिन असलियत और सच्चाई के क़ीमती ख़ज़ाने को कोई पूछने वाला नहीं होता?

हज़रत अली[अ०] अपनी एक हदीस में इस मुश्किल की वजह चालबाज़ी और धोखेबाज़ी बताते हैं।

इमाम की बात *अम्रे आस* के बारे में है। आप उसकी बातों को ग़लत, उसकी बातचीत को झूठ, और वादों को ग़लत कहते हैं।

इमाम अम्रे आस के बारे में फ़रमाते हैंः

> उसने क़यामत को भुला दिया है जिसकी वजह से वह सच नहीं बोल पा रहा है।[1]

इसलिए क़यामत और हिसाब-किताब के दिन को हर पल दिमाग़ में रखना चाहिए ताकि हमारी ज़बान से जो बात भी निकले वह सही हो और हर तरह की ग़लती, झूठ या धोखे से पाक हो।

जी हाँ! ज़बान के बारे में बातें बहुत कुछ कही जा सकती हैं लेकिन ज़्यादा बोलना भी ग़लत है।

इन्शाअल्लाह! हम सब कोशिश करेंगे कि अपने मौला हज़रत अली[अ०] की हदीसों के साये में रहकर अपनी कमज़ोरियों व कमियों को दूर करें और हमारी बातें कम हो जाएं। हमारी बातें कम होंगी और ज़बान चुप रहेगी तो इससे हम बहुत सारी बुराईयों से भी बच जाएंगे और गुनाहों से भी बचे रहेंगे क्योंकि बहुत सारे गुनाह ज़बान के रास्ते ही किए जाते हैं।

---

[1] ख़ुतबा/82

अनमोल मोती

आदमी की क़ीमत

इमाम अली[अ०] ने फ़रमाया हैः

> हर आदमी की क़ीमत वह हुनर है जो उसके अन्दर है।

यह एक ऐसी अनमोल बात है कि इसके जैसी कोई बात हो ही नहीं सकती।

इन्सान की असली क़ीमत उसका इल्म व कमाल है। अपने इल्म और कमाल की वजह से ही आदमी आंका जाता है। इसी के हिसाब से आदमी ऊपर या नीचे जाता है क्योंकि अन्दर तक का पता लगाने वाली आंखें आदमी की शक्ल-सूरत, क़द और उसके बदन को नहीं देखतीं बल्कि उसके हुनर को देखती हैं और इसी हुनर के हिसाब से उसकी क़ीमत तय करती हैं। कहने का मतलब यह है कि आदमी को जितना हो सके पढ़ने-लिखने और समझने-बूझने पर ध्यान देना चाहिए।

चार चीज़ें जो हर जगह काम आती हैं

इमाम अली[अ०] ने हज़रत हसन[अ०] से फ़रमायाः

ऐ बेटा! इन बातों का ध्यान रखो क्योंकि इनके होते हुए तुम जो कुछ करोगे, उस में तुम्हें कभी नुक़सान नहीं पहुँचेगाः

सबसे बड़ी पूँजी अक़्ल व इल्म है और सब से बड़ी ग़रीबी बेवक़ूफ़ी व नासमझी है।

सबसे बड़ी बुराई घमंड है और सब से बड़ी अच्छाई इन्सान का अपना अख़्लाक़ (सदाचार) है।

नाकामी की वजह

डर का नतीजा नाकामी है।

महरूमी की वजह

शर्म करोगे तो चीज़ें छिन जाएंगी।

गया वक़्त फिर हाथ नहीं आता

फ़ुरसत की घड़ियाँ बादलों की तरह उड़ जाती हैं। इसलिए भलाई इसी में है कि मिले हुए मौक़ों को ग़नीमत जानो।

दुखी लोगों की मदद करना

किसी दुखी आदमी की मुसीबत को दूर करने से बड़े-बड़े गुनाह धुल जाते हैं।

सख़ावत हां, फुज़ूलख़र्ची ना

सख़ावत[1] करो, लेकिन फुज़ूलख़र्ची न करो।

यह भी तो दौलत है

सब से अच्छी पूँजी यह है कि तमन्नाओं को कम किया जाए ।

*****

[1] ज़रूरत से बढ़कर देना